REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514
VOLUME - 8 | ISSUE - 9 | JUNE - 2019

# अंग्रेज भाषाई एकता के बाधक बने – रामविलास शर्मा

भावना सैनी
पीएच–डी शोधार्थी (हिन्दी)
जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर.

**प्रस्तावना:**

रामविलास शर्मा ने मध्यकाल से लेकर आधुनिक काल तक सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, व्यापारिक परिवर्तनों के आधार पर पूरे देश में हिन्दी के सहज, स्वाभाविक विकास का इतिहास प्रस्तुत किया। इसी क्रम में उन्होंने हिन्दी के जातीय स्वरूप की चर्चा करते हुए, उसके विकास को रेखाकिंत किया तथा दूसरी तरफ ब्रज, अवधी, भोजपुरी आदि बोलियों के बीच हिन्दी के जातीय भाषा के रूप में प्रतिष्ठित होने का तथ्य सामने रखा। वे चाहते थे कि जिस तरह भाषा के आधार पर बाग्ला, गुजराती, मराठी आदि जातियों की पहचान होती है, उसी तरह हिन्दी प्रदेश के लोग भी जनपदीय बोलियों के आधार पर पहचाने जाने के बजाय एक हिन्दी भाषी जाति के रूप में पहचाने जाए। डॉ. शर्मा हिन्दी भाषी जाति की भूमिका को पहचानते हुए लिखते हैं – '' हम हिन्दी भाषी एक महाजाति हैं। इस महाजाति के अंतर्गत जितनी भी बोलियों के लोग आते हैं, उन सबका साहित्य एक ही जाति का साहित्य कहलायेगा। हमारी जाति हिन्दी है, हमारी भाषा हिन्दी हैं इसलिए, हिन्दी क्षेत्र की सभी बोलियों के साहित्य को हम हिन्दी साहित्य के अन्तर्गत लेते है।''[1]

इस प्रकार शर्माजी ने ब्रज भाषा, अवधी, खड़ी बोली आदि को हिन्दुस्तानी जाति के निर्माण में सहायक माना और कहा कि ''हिन्दुस्तानी प्रदेश के मजदूर वर्ग में अवधी, ब्रज आदि बोलने वाले लोग हैं। इनका सामान्य परिवेश और सामान्य आर्थिक संबंध उन्हें एक सामान्य भाषा बोलने पर मजबूर करते हैं। यह भाषा खड़ी बोली या हिन्दुस्तानी होती हैं। ..... भारतेन्दु भोजपुरी क्षेत्र के थे, प्रतापनारायण मिश्र अवध के, राधाचरण गोस्वामी ब्रज के ; इन सबने गद्य के लिए खड़ी बोली को अपनाया। यह विकास उन्नीसवीं सदी में हुआ किन्तु उसका आरम्भ पहले हो चुका था। इस विकास का कारण था पूँजीवाद का विकास। भारत में पूँजीवाद उन्नीसवीं सदी से आरम्भ नहीं हुआ। व्यापारी पूँजीवाद उन सौदागरों के साथ शुरू हुआ जो अपने साथ खड़ी बोली सुदूर हैदराबाद ले गये।''[2]

इन सब तथ्यों से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि जातीय भाषा के उदय व निर्माण में 'व्यापार और वितरण' की मुख्य भूमिका रही है। इसी व्यापार–वितरण को शर्माजी सौदागरी पूँजी कहते हैं। इसका उद्भव पहले होता है और पूँजीवादी उत्पादन पद्वति बाद में। इस सौदागरी पूँजी का अभ्युदय किसी भी उत्पादन–पद्वति में हो सकता है। डॉ. शर्मा के अनुसार जाति हमेशा किसी प्रदेश में स्थायी रूप से रहने वाले जनों से मिलकर बनती हैं। अनेक जनपदों के मेल से जातीय प्रदेश का निर्माण होता रहता है। अनेक जनपदों के मेल से जातीय प्रदेश का निर्माण होता रहता है। जनपदीय भाषाओं के माध्यम से जनपदों में आपसी सम्पर्क बढ़ता है। यह जनपदीय भाषा अपने जनपदीय

स्वरूप से आगे बढ़कर जातीय भाषा का रूप ग्रहण कर लेती हैं। डॉ. शर्मा लिखते हैं कि हमारी जाति का चरित्र संघर्षो द्वारा और पक्का हुआ। इस संघर्षो के दो पहलू थे, एक तो जातीय, दूसरा जनवादी। यानी एक तरफ तो यहाँ के लोग विदेशी आततायियों के खिलाफ लड़े, दूसरी तरफ वे सामन्ती उत्पीड़न के खिलाफ, वर्ण–व्यवस्था और पुरोहितों–सामन्तों के विशेष अधिकारों के खिलाफ भी लड़े। भक्ति–आन्दोलन में ये दोनों पहलू मौजूद हैं। जुलाहे और किसान इस आन्दोलन को शक्ति देने वाले हैं। सौदागर उसके सहायक हैं हिन्दू और मुसलमान, सूफी और संत दोनों उसमें शामिल हैं। भक्ति–आन्दोलन एक जातीय और जनवादी आन्दोलन है।''[3]

डॉ. शर्मा ये भी मानते थे कि हिन्दु–मुसलमान भले ही धार्मिक दृष्टि से अलग नजर आते हों किन्तु उनके बीच सामान्य सांस्कृतिक संबंध भी दिखाई देता है। यही कारण है कि हिन्दी में जायसी, रहीम, रसखान, शेख आलम पजनेस ने भी लिखा इनकी संस्कृति भी वही थी जो सूर, मीरा, तुलसी, नन्ददास, दादू, रैदास आदि की थी।

हमारी जातीय एकता का सबसे बड़ा प्रमाण यह भी है कि 'कबीर' को हिन्दु–मुसलमानों दोनो ने अपनाया।

डॉ. रामविलास शर्मा यह भी बताते हैं कि शेरशाह व अकबर जैसे शासकों की नीति भी हिन्दी भाषा के प्रति हमेशा उदार रही, शेरशाह ने तो अपने शासनकाल में फारसी के साथ हिन्दी में कामकाज करने की हिदायत भी दे रखी थी जबकि अंग्रेजों की नीति भारतीय भाषाओं के प्रति हमेशा अनुदार रही, उन्होंने अंग्रेजी भाषा के सामने सभी भारतीय भाषाओं को हतोत्साहित करने का कार्य किया ताकि केन्द्र में हमेशा अंग्रेजी भाषा ही रहे। इससे हमारे देश का भाषाई विकास अवरूद्ध हो गया। अंग्रेजों ने भारतीय भाषाओं और संस्कृति के मामलों में दखल देकर यहाँ की जातीय एकता में फूट डालने का कार्य किया। शर्माजी लिखते है – ''हिन्दुस्तान के लोग सामन्ती ढाँचा खत्म करके अपनी जातीय राज्यसत्ता कायम कर लेते लेकिन तभी अंग्रेजों की दखलन्दाजी से उनकी ऐतिहासिक प्रगति में बाधा पड़ी।''[4]

अंग्रेजों ने अपने राज में गाँवों की पुरानी व्यवस्था को तोड़ा साथ ही उन्होंने सामन्तवाद और सामन्ती संस्कृति को भी मजबूत किया। हिन्दी भाषी इलाके को भी उन्होंने अपनी नीति के तहत कई सूबों में बाँटा।

डॉ. रामविलास शर्मा हिन्दी भाषी प्रदेश को एक पिछड़ा हुआ प्रदेश इसलिए भी कहा क्योंकि यहाँ की जातीय–चेतना का प्रसार उस तरह से नही हुआ जिस प्रकार से बंगाल, महाराष्ट्र, तमिलनाडू, या आंध्रप्रदेश का हुआ।

महाराष्ट्र में जिस प्रकार शिवाजी ने एक जातीय रियासत, कायम की थी वेसे कोशिश हिन्दी भाषी इलाके में नहीं हुई। यहाँ शिक्षा का कोई जातीय क्रम भी निश्चित नहीं था साथ ही शिक्षा की जिम्मेदारी भी मुल्ला–पंडितों के हाथों में थी व भाषा की एकता के हिसाब से सब जगह एक ही लिपि का चलन न था।

यही कारण था कि अंग्रेजों हिन्दी की जातीय एकता को तोड़ने का उपर्युक्त अवसर प्राप्त हो गया। शर्माजी हिन्दी–उर्दु के भेद के लिए भी सबसे ज्यादा जिम्मेदार अंग्रेजों को ही मानते है। वे लिखते है – ''गिलक्राइस्ट ने हिन्दुओं और मुसलमानों की अलग भाषाओं के सिद्धांत की रचना की रिजले ने धर्म के आधार पर दो कौमें गढ़ी और ग्रियर्सन ने भाषा और संस्कृति के क्षेत्र में फूट के उसूल को धार्मिक रूप दिया। सर सैयद ने लश्करों में नयी भाषा बनने की तजवीज पेश की। इकबाल ने मुस्लिम कौम और मुस्लिम संस्कृति का नारा लगाया। ये सब साम्राज्यवादी विषवृक्ष के फल थे।''[5]

डॉ. शर्मा यह मानते है कि यदि अंग्रेजों को हिन्दुस्तानियो से ही मदद न मिली होती तो हमारे देश का इतिहास ही दूसरा होता जिस प्रकार अंग्रेजों ने हिन्दी भाषी इलाके में सामन्ती अवशेष कायम रख सके व हिन्दू–उर्दू के सवाल से साम्प्रदायिकता उभारने का काम किया व एक ही भाषा की दो धाराएँ बहाकर और दोनों पर अंग्रेजी लादकर आम जनता को अशिक्षित रखने का काम किया उससे हमारे देश की जो सामाजिक और सांस्कृतिक क्षति हुई उससे हम कभी न उभर पाएँ। यद्यपि हमारे साहित्यकारों ने जनवादी संस्कृति की परम्परा को निबाहे रखा, इस सन्दर्भ में डॉ. रामविलास शर्मा लिखते हैं – ''हिन्दी–उर्दु के लेखकों के सहयोग को अंग्रेज खत्म नहीं कर पाए। भारतेन्दु, प्रतापनारायण मिश्र, बालमुकुन्द गुप्त, जो आधुनिक हिन्दी के निर्माता हैं, उर्दु के भी लेखक थे। प्रेमचंद ने उस परम्परा को और आगे बढ़ाया।''[6]

भारतेन्दु ने हिन्दी–उर्दु की एकता और परस्पर भेद के बारे में 8 सितम्बर 1873 की कविवचन सुधा में जो लिखा था वह यह है कि ''हिन्दी और उर्दु में अन्तर क्या है हम बिना संकोच के उत्तर देते हैं कि भाषाओं में

कुछ अन्तर नही है, क्योंकि व्याकरण की विभक्तियों और नियम दोनों के एक है, पर इतना ही अंतर है कि हिन्दी में जिसके लिए हिन्दी शब्द नहीं, मिलता वहाँ संस्कृत शब्द काम में आते हैं और उर्दू में सहज हिंदी शब्द होने पर भी और जहाँ शब्द नहीं मिलते हैं वहाँ तो अवश्य ही अरबी और फारसी के शब्द लिखे जाते हैं यही दोनों में अन्तर हैं।''[7]

जिस प्रकार से भारतेन्दु ने उर्दू के प्रचलित शब्दों को बहिष्कार नहीं किया उसी प्रकार बालकृष्ण भट्ट भी उर्दू के सरल शब्दों का प्रयोग करते रहे। बालकृष्ण भट्ट ने फरवरी 1885 के ''हिन्दी प्रदीप'' में लिखा था, ''यह कौन कहता है कि उर्दू दूसरी वस्तु है। सच पूछों तो उर्दू भी इसी हिन्दी का रूपान्तरण है।''[8] डॉ. शर्मा हिन्दी–उर्दू की एकता को हमारे जातीय विकास के लिए आवश्यक मानते थे। वे उर्दू व हिन्दी के व्यवहार और शिक्षा आदि में किसी तरह के विरोध के खिलाफ थे। वे यह मानते थे कि अपनी जाति के सांस्कृतिक इतिहास के लिए अपनी जातीय भाषा के विकास के लिए उर्दू को दबाया नहीं जा सकता, हमारी भाषा और साहित्य का इतिहास उर्दू के बिना अधूरा रहेगा।

डॉ. शर्मा हमारे देश में समाजवादी व्यवस्था के निर्माण व जनता के संगठन व उसकी समुचित शिक्षा के लिए भाषा व लिपि के बँटवारे के खिलाफ थे वे लिखते हैं – ''यदि एक ही कारखानें के मजदूर दो लिपियों से काम लेते हैं, तो इससे उनकी शक्ति कम होगी, उनकी संस्कृति में दरारे पड़ेगी। इसके सिवा हिन्दुस्तानी जाति दुनिया की सबसे बड़ी जातियों में है। अंग्रेजी बोलने वाले बहुत है, लेकिन वे अनेक जातियों के हैं। एक ही भाषा बोलने वाली कोई जाति हमसे संख्या में बड़ी हो सकती है तो चीनी है। भारत की सभी जातियों में हमारी जाति सबसे बड़ी है, यह निर्विवाद हैं। ऐसी स्थिति में हमारी भाषा का राष्ट्रीय और अर्न्तराष्ट्रीय महत्व हैं। स्पष्ट है कि हमारी भाषा अपनी पूरी ताकत से तभी प्रगति कर सकती है जब उसमें जाति के सभी तत्वों का सहयोग हो।''[9] एक भाषा और एक लिपि का चलन जातीय विकास की अनिवार्य आवश्यकता हैं इसे शर्मा जी भली प्रकार समझा उन्होंने माना कि जिन हिन्दुओं और मुसलमानों ने मध्यकालीन धम्र की खाई को पाट लिया था और हर प्रदेश में एक संयुक्त जातीयता का विकास किया था, वे शब्दावली और लिपि के भेद को भी अवश्य दूर कर लेते और शक्तिशाली राष्ट्र का निर्माण कर लेते। लेकिन अंग्रेजो ने अपनी शिक्षा नीति से दोनों को एक–दूसरें से अलग तो किया ही साथ ही हिन्दी हिन्दुओं की व उर्दू मुसलमानों की भाषा बना दी गई।

शर्मा जी लिखते है कि – ''हिन्दी भाषी इलाका भारत का सबसे बड़ा जातीय इलाका है। संख्या के विचार से हिन्दुस्तानी जाति दुनिया की तीन–चार सबसे बड़ी जातियों में गिनी जाएगी। ऋग्वेद और महाभारत की रचना इसी प्रदेश में हुई है। यहीं की नदियों के किनारे वाल्मीकि और तुलसी ने अपने अनुष्टुप और चौपाइयाँ गाई है। तानसेन और फैयाज खाँ, हाली, मीर, अकबर, गालिब, भारतेन्दु, प्रेमचंद, निराला यही के रत्न हैं। ताजमहल और विश्वनाथ के मन्दिर यही के हाथों ने गढ़े हैं। आल्हा और कजली ने सैकड़ों साल तक यही का आकाश गुँजाया है। अठारह सौ सत्तावन में यही की धरती हिन्दुओं और मुसलमानों के खून से सींची गई है। जिस दिन यह विशाल हिन्दी–प्रदेश एक होकर नये स्वाधीन जनजीवन का निर्माण करेगा उस दिन इसकी संस्कृति एशिया का मुख उज्ज्वल करेगी। किसानों और मजदूरों की एकता जो जनता की एकता की धुरी है, वह दिन निकट लाएगी। हिन्दी ओर उर्दू के लेखकों को इस जनता के हितों को ध्यान में रखकर अपनी जातीय परम्परा के अनुसार लोकप्रिय भाषा ओर जनवादी साहित्य के विकास मे आगे बढ़ना चाहिए।''[10]

जातीय भाषा के रूप में हिन्दी का विकास और प्रसार व हिन्दी जाति के निर्माण और उसके गठन की प्रक्रिया को समझाने के साथ–साथ डॉ. रामविलास शर्मा ने उन उपकरणों को भी समझाने का प्रयास किया हैं जिससे जातीयता का निर्माण होता है और आपसी संबंध मजबूत होते है।

डॉ. शर्मा के अनुसार ''आधुनिक जातियों के निर्माण के लिए सामान्य भाषा, सामान्य प्रदेश, सामान्य आर्थिक जीवन और सामान्य संस्कृति आवश्यक तत्व माने गये हैं''[11]

यद्यपि शर्माजी ये मानते हैं कि ये तत्व न्यूनाधिक मात्रा में सामन्तकालीन लघुजातियों में भी मिलते हैं, इनसे ही बाद में अपने विकास क्रम में आधुनिक जातियों के निर्माण का कारण बनता है। डॉ. शर्मा ने इस संबंध में विशेष रूप से जन, लघुजाति और महाजाति के निर्माण की रूपरेखा को समझाते हुए लिखा है – ''जिन तत्वों से जन का निर्माण होता है, उन्हीं से सामन्तयुगीन लघु जाति का और पूँजीवादी महाजाति का निर्माण होता है किन्तु इन तत्वों के गुण और परिमाण में अन्तर होता हैं। इसलिए जन, लघुजाति और महाजाति में गुणात्मक अंतर हैं।''[12]

इस प्रकार महाजाति के निर्माण की यह प्रक्रिया एक सुदीर्घ प्रक्रिया है, जन से महाजाति बनने व इनके बीच होने वाले परिवर्तनों की धुरी आर्थिक जीवन ही है। इससे ही भिन्न बोलियों बोलने वाले जन एक दूसरे के निकट आते हैं, बोलियों के बीच होने वाले वाले व्यापक व्यवहार से 'भाषाओं' का अभ्युदय होता है। यद्यपि व्यापार के प्रसार से महाजाति के गठन व इससे जातीय भाषा के गठन और प्रसार में सहायता अवश्य मिलती हैं लेकिन लोगों में उनकी लघुजातियों वाले संस्कार पूरी तरह से खत्म नहीं होते। इस प्रकार लघुजाति से महाजाति बनने की यह प्रक्रिया एक निश्चित अवधि में पूर्ण नहीं होती वह लगातार चलती हैं।

डॉ. शर्मा का मानना है कि जातीय भाषा बनने से पहले हिन्दी या खड़ी बोली एक जनपद की भाषा थी वही ब्रज, अवध, बुन्दलेखण्ड के जनपदों में रहने वाले आपस में बँटे हुए थे। इसलिए ये जनपद किसी एक जाति के रूप में संगठित नहीं हुए। ब्रज में रहने वाले ब्रज, अवधी के अवधी व बुन्लेदखण्ड के लोग बुन्देलखण्डी भाषाएँ बोलती थे। इस प्रकार एक जातीय भाषा के रूप मे उनके पास आपसी व्यवहार की कोई भाषा न थी। जातीय भाषा के रूप में हिन्दी के प्रसार के लिए समाज में जो परिवर्तन हुआ उसका उल्लेख करते हुए शर्माजी लिखते हैं – ''तेरहवीं–चौदहवी सदी में सामन्ती समाज का ढाँचा ढीला पड़ने लगा था, वर्ण–व्यवस्था शिथिल हो रही थी और लोग अपने खानदानी पेशे छोड़कर नये पेशे अपनाने लगे थे। तुर्कों के हमलों से यह ढाँचा और कमजोर पड़ा ..'' तुर्क बादशाहों ने बाजार तोले के बाँट, सिक्कों आदि के बारे में जो सुधार किये, उनसे सौदागरों को फायदा पहुँचा। इस जमाने में नई–नई मंडियाँ और नये–नये शहर आबाद हुए।''[13]

इससे डॉ. शर्मा ने यह स्पष्ट किया कि व्यापार की उन्नति से पुराने जनपदों में जो अलगाव चल रहा था व पुरी तरह खत्म हो गया डॉ. शर्मा के अनुसार मुगल बादशाहों को व्यापार में गहरी दिलचस्पी थी, अकबर स्वयं व्यापार करता था। उस समय मुगल राज्यसत्ता की आमदनी का जरिया सिर्फ जमीन न होकर व्यापार भी था।

वे लिखते हैं ''पटना, बनारस, इलाहबाद, आगरा और दिल्ली ऐसे केन्द्र बन गये जिनके चारों तरफ एक कौमी बाजार कायम हुआ। यात्री मानरीके के अनुसार सन् 1640 में आगरा की आबादी छः लाख थी। मार्क्स ने भारतीय इतिहास पर अपनी पुस्तक में लिखा है कि अकबर के जमाने में दिल्ली दुनिया का सबसे बड़ा शहर था। जो नया बाजार कायम हुआ, उसके सबसे बड़े केन्द्र आगरा और दिल्ली ही थे।''[14]

इस प्रकार व्यापार और विनियम का यह सिलसिला सत्रहवी सदी में भी कायम रहा। हिन्दुस्तानी कपड़े की माँग विदेशों में बढ़ने लगी। हमारा रोजगार भी बढ़ता गया सत्रहवीं सदी के प्रारम्भ में आगरा से जो कपड़ा भेजा जाता वह कपड़ा अवध से बनकर विलायत जाता था। इस तरह आपसी मेलजोल से ब्रज और अवध एक बाजार के रूप में संगठित हुए। यद्यपि अवध और भोजपुरी क्षेत्रों में भी अनेक व्यापारिक केन्द्र स्थापित हुए थे। लेकिन ये क्षेत्र उतने शक्तिशाली नहीं थे जितने दिल्ली और आगरा के क्षेत्र थे। हिन्दी भाषी प्रदेश में दिल्ली व्यापार और राजनीतिक जीवन का मुख्य केन्द्र रहा। डॉ. शर्मा का मानना है कि ''तुर्कों और मुगलों के शासनकाल से ही दिल्ली उतर भारत में राज्यसत्ता का बहुत बड़ा केन्द्र थी। इस कारण भोजपुरी या अवधी जातीय भाषा के रूप में विकसित न हुई; जातीय भाषा बनी दिल्ली केन्द्र वाली खड़ी बोली।''[15]

अतः सोहलवीं–सत्रहवीं सदियो में उत्तर भारत के बिखरे हुए बाजार को एक–दूसरें से जोड़ने का काम जिस भाषा ने किया वह भाषा थी हिन्दी या हिन्दुस्तानी यही भाषा आगे चलकर सम्पूर्ण हिन्दी क्षेत्र को जोड़ने वाली एक जातीय भाषा बन गई।

व्यापारियों की सामान्य भाषा खड़ी बोली बताते हुए शर्माजी ने लिखा है कि, ''व्यापार की उन्नति के लिए आवश्यक था कि एक भाषा और लिपि का चलन हो। एडवर्ड टेरी ने 1655 में प्रकाशित अपने यात्रा वृतान्त में लिखा था, ''इन्दोस्तान देश की बोलचाल की भाषा अरबी–फारसी जबानों से बहुत साम्य रखती हैं लेकिन बोलने में ज्यादा सुखद और सरल हैं। इसमें काफी रवानी है और थोड़े शब्दों में बहुत कुछ कहा जा सकता है। लोग हमारी ही तरह यानी बाँए से दाएँ को लिखते और पढ़ते है।''...[16]

ग्रियसन के अनुसार ''उन दिनों (अर्थात् सत्रहवीं सदी) के कुछ अंग्रेज सौदागर अवश्य ही धारा–प्रवाह हिंदुस्तानी बोल लेते थे।''[17]

इस प्रकार तुर्को, पठानों ईरानियों, उजबकों आदि के आने से पहले भी हिन्दी भाषा थी। इन बाहर से आने वाले लोगों के शब्दों से न केवल हमारी भाषा और समृद्ध हुई बल्कि उसने अपने जातीय रूप की भी रक्षा की। यही नहीं गैर हिन्दी भाषी अनेक विद्वानों ने देश में एक सम्पर्क भाषा के रूप में इसे सबसे उपर्युक्त माना।

डॉ. शर्मा ने मई, सन् 1958 के 'समालोचक' में लिखा था, ''यदि हिन्दी भाषी जनता संगठित हो, यदि वह अपने प्रदेश में हिन्दी को पूर्ण रूप से राजकाज की भाषा बनाये तो यह असम्भव है कि यह विशाल प्रदेश और बहुसंख्यक जनता सारे देश को अपने साथ खींचकर न ले चल सके।''[18]

यद्यपि डॉ. रामविलास शर्मा किसी भी प्रदेश की इच्छा के विरूद्ध उसके लिए हिन्दी को सम्पर्क भाषा बनाने का जोर नहीं देते लेकिन वे अंग्रेजी प्रेमियों को, हिन्दी भाषी प्रदेशों पर अंग्रेजी लादने का पुरजोर विरोध करते हैं।

वे लिखते हैं ' ''हिन्दी भाषी जाति भारत की सबसे बड़ी जाति है। वह केन्द्र में अपने प्रतिनिधियों को हिन्दी लिखने–बोलने के लिए बाध्य करके अंग्रेजी का प्रभुत्व खत्म कर सकती है''[19]

इस प्रकार हिन्दी भाषी जाति के लोग यदि अपनी भाषा और संस्कृति की रक्षा करने के लिए संगठित हो जाएँ और इसके लिए लगातार संघर्ष करें तो वे अवश्य ही अपनी जातीयता की रक्षा कर सकते हैं। डॉ. शर्मा भाषा की समस्या को मूलतः जातीय समस्या का ही एक अंग मानते हैं, वे कहते हैं कि ''जातीय समस्या को गौण समझकर उसे छोड़ देना भी हानिकारक हैं। यदि जनसाधारण का संगठन करने वाले प्रगतिशील विचारक इस समस्या की उपेक्षा करेंगे, तो साम्प्रदायिक और प्रतिक्रियावादी शक्तियाँ उसे अपने हित में इस्तेमाल करेंगी और श्रमिक जनता के संगठन और आन्दोलन पर वार करेगी इसीलिए जातीय समस्या और श्रमिक जनों की शोषण मुक्ति–समस्या में कौन गौण है, कौन प्रधान, इस बात का ध्यान रखते हुए प्रगतिशील विचारकों को जातीय समस्या के समाधान की ओर बढ़ना चाहिए।''[20]

डॉ. रामविलास शर्मा ने हिन्दी भाषा और उसके जातीय स्वरूप पर अनेक बार और काफी विस्तार के साथ लिखा हैं। उन्होंने अपने लेखन में हिन्दी–उर्दू समस्या तथा हिन्दी क्षेत्र में भाषा और बोलियों के प्रश्नों पर विचार करके सबका ध्यान इंगित किया।

इस प्रकार महान आलोचकों की परम्पराओं में डॉ. रामविलास शर्मा साहित्य और उसका माध्यम भाषा व उसका आधार समाज, उसकी संस्कृति आदि तमाम चिंताओं से युक्त एक समग्र और व्यापक दृष्टि रखने वाले चिंतक, विचारक और समालोचक के रूप में अग्रणी स्थान रखते हैं।

उनके व्यापक कार्यक्षेत्र को देखते हुए नामवरसिंह ने कहा है – ''साहित्य चिंतन के क्षेत्र में शायद ही हिन्दी में कोई दूसरा आलोचक हो जिसने भाषा पर इतनी गंभीरता से विचार किया हो।''[21]

शर्माजी हिन्दी भाषा संबंधी अनेक व्यवहारिक व सैद्धांतिक, समस्याओं का विवेचन करके 'भाषा और समाज' तो लिखी ही, उसके बाद 'भारत के प्राचीन भाषा परिवार और हिन्दी'जैसा लगभग दो हजार पृष्ठों का, तीन खण्डों में व्यापक कार्य भी किया।

## संदर्भ ग्रंथ :–


1. भाषा और समाज, डॉ. रामविलास शर्मा, पृ;362
2. भारत की भाषा–समस्या, डॉ. रामविलास शर्मा, पृ; 81
3. भारत की भाषा–समस्या, डॉ. रामविलास शर्मा, पृ; 87
4. वही पृ. 87
5. वही पृ. 88
6. वही पृ. 89
7. भाषा और समाज, डॉ. रामविलास शर्मा, पृ. ; 320
8. वही, पृ; 320
9. वही, पृ; 331
10. भारत की भाषा–समस्या, डॉ. रामविलास शर्मा, पृ; 91
11. भाषा और समाज, डॉ. रामविलास शर्मा, पृ ; 247
12. वही, पृ. ; 247
13. भारत की भाषा समस्या, डॉ. रामविलास शर्मा, पृ; 84
14. वही, पृ. 86
15. भाषा और समाज : डॉ. रामविलास शर्मा पृ ; 273

16. वही, पृ' 275 ग्रियर्सन द्वारा उद्धत अंश, लिग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया, पृ;2
17. वही, पृ. 274 ग्रियर्सन द्वारा अंश, वही, पृ; 2
18. भारत की भाषा समस्या, प्रथम संस्करण की भूमिका ; पृ. ; 5
19. वही पृ; 5
20. भाषा और समाज, डॉ. रामविलास शर्मा, पृ. 281
21. हिन्दी के प्रहरी ; डॉ. रामविलास शर्मा, विश्वनाथ त्रिपाठी अरूण प्रकाशन पृ. 410

LBP PUBLICATION